मध्य रेल की अर्धवार्षिक पत्रिका

अंक 8 अक्टूबर,2011 से मार्च, 2012 एवं अप्रैल,2012 से सितंबर,2012 (संयुक्तांक)

रेल सुरभि

स्वामी विवेकानंद विशेषांक

इस अंक में

संरक्षक

सुबोध जैन
महाप्रबंधक

परामर्शदाता

पी.के.सक्सेना
मुख्य राजभाषा अधिकारी

प्रधान संपादक

पारस नाथ शर्मा
उप महाप्रबंधक
(राजभाषा)

संपादक

आशा मिश्रा
राजभाषा अधिकारी

उप संपादक

आर.एस.माथुर
वरिष्ठ अनुवादक

संपादन सहयोग

साधना यादव
वरिष्ठ अनुवादक

एस.एन.पाण्डेय
वरिष्ठ अनुवादक

सुधीर शिल्लेदार
वरिष्ठ अनुवादक

गिरीश जी. चितले
कनिष्ठ अनुवादक

सहयोग

सुनील विष्णु उदंड
मुख्य टंकक

हरी प्रकाश श्रीवास्तव
कनिष्ठ अनुवादक

संगीता मिश्रा
कनिष्ठ लिपिक

क्र	रचना/लेख/कविता का शीर्षक	विधा	रचनाकार/लेखक का नाम सर्वश्री	पृष्ठ संख्या
1.	आपकी बात			04
2.	विवेकानंद पत्रों में	संकलन	एम.के. अग्रवाल	05
3.	पावर पाइंट विवेकानंद	लेख	श्रीमती आशा मिश्रा	08
4.	आधुनिक भारत के नव निर्माण में स्वामी	लेख	मुकेश कुमार बत्रा	10
5.	स्वामी विवेकानंद-एक युग पुरूष	कविता	श्रीमती सुनीता ल. कटारिया	11
6.	स्वामी विवेकानंद: व्यक्तित्व एवं कृतित्व	लेख	आर.एस.माथुर 'राज'	12
7.	विश्वचेता स्वामी विवेकानंद	लेख	ऋषि कुमार मिश्र	14
8.	आज भारत धन्य हो गया	कविता	सत्य वीर सिंह	16
9.	शक्ति उपासक-विवेकानंद	लेख	श्याम नाथ पांडेय	18
10.	महिला स्वातंत्र्य और स्वामी विवेकानंद	लेख	श्रीमती वंदना दुबे	20
11.	भारत के सपूत - स्वामी विवेकानंद	कविता	डी.के.सोनी	21
12.	विवेकानंद का शिक्षा दर्शन	लेख	वेद प्रकाश	22
13.	गजल	कविता	गणपत के.कपिल	24
14.	ध्यान शक्ति के चमत्कार	लेख	श्रीमती नीति कौशल	25
15.	विवेकानंद	कविता	सत्य नारायण दुबे 'सत्य'	26
16.	विवेकानंद	लेख	श्रीमती संगीता मिश्रा	27

संपर्क सूत्र

राजभाषा विभाग, महाप्रबंधक कार्यालय, मध्य रेल, मुंबई छशिट
दूरभाष: 54753, 54, 56, 68 (रेल)/022-22697123
फैक्स - 54755/022-22697123
ई-मेल : railsurabhi@rediffmail.com

पत्रिका में संकलित सभी विचार लेखकों के अपने विचार हैं । उन्हें भारत सरकार, रेल मंत्रालय या मध्य रेल के विचार न समझे जाएं ।

प्रधान संपादक की कलम से

मध्य रेल मुख्यालय राजभाषा विभाग की हिंदी गृह पत्रिका **'रेल सुरभि'** अब तक प्रिंट रूप में पाठकों तक पहुंचाई जा रही थी परंतु सूचना प्रौद्योगिकी के बढ़ते प्रयोग तथा इसकी व्यापकता को ध्यान में रखते हुए पत्रिका का यह अंक **ई-पत्रिका** के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है । इसका उद्देश्य पत्रिका को रेलनेट एवं इंटरनेट के माध्यम से रेल अधिकारियों एवं कर्मचारियों के साथ-साथ हिंदी साहित्य के पठन-पाठन में रूचि रखने वाले विद्वजनों तक पहुंचाना भी है ।

यह वर्ष युगपुरूष स्वामी विवेकानंद की 150वीं जयंती के रूप में मनाया जा रहा है, इसलिए मध्य रेल की इस पत्रिका का यह अंक युगद्रष्टा एवं अध्यात्म पुरूष स्वामी विवेकानंद को समर्पित है । मुझे आशा है कि आपको हमारा यह प्रयास पसंद आएगा । हमें आपकी प्रतिक्रिया एवं सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी ताकि हम पत्रिका के आगामी अंकों को और अधिक बेहतर रूप में आप तक पहुंचा सकें ।

(पारस नाथ शर्मा)

-: आपकी बात :-

श्रद्धेय संपादक जी,

सादर प्रणाम,

'रेल सुरभि' का **'कथा विशेषांक'** आज प्राप्त हुआ । नयनाभिराम आवरण सुखद भाव छोड़ गया। जागरूक संपादन ने पत्रिका को महत्वपूर्ण बना दिया है। आज जब भाषा के नाम पर लोगों को बांटने की कोशिश हो रही हैं, तब तत्कालीन **मुख्य राजभाषा अधिकारी** श्रद्धेय श्री राजकुमार पाराशर जी का संदेश **" संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का जितना अधिक प्रयोग - प्रसार होगा जनता में राष्ट्रीयता तथा भाईचारे की भावना उतनी ही तेजी से विकसित होगी"** जन मानस में एकता की भावना को सबल बनाने का शंख फूंक रहा है।

मुकेश बत्रा
वरिष्ठ स्नातकोत्तर शिक्षक (व्याख्याता)
मध्य रेल, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय (अंग्रेजी माध्यम)
भुसावल

आदरणीय संपादक,

कथा विशेषांक के रूप में प्रकाशित मध्य रेल की पत्रिका **रेल सुरभि** में प्रकाशित रचनाओं से मुझे रेल कर्मचारियों की लेखन क्षमता को जानने का सुअवसर मिला। पत्रिका का आवरण तथा साज-सज्जा सुरूचिपुर्ण तथा आकर्षक हैं। मूक साक्षी तथा एक फैशन डिजाइनर की आत्मकथा जैसी भाव प्रधान कहानियों के कारण पत्रिका का यह अंक संग्रहणीय है। संपादक मंडल बधाई का पात्र है।

श्रीमती साधना त्रिपाठी
अनुसंधान अधिकारी (राजभाषा)
गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग, केंद्रीय सदन , बेलापुर, नवी मुंबई

संपादक, रेल सुरभि,

पत्रिका का कथा विशेषांक हाथ में आते ही मैं इसे पढ़ने पर विवश हो गया। सभी रचनाएं स्तरीय प्रेरणादायक हैं। मार्गदर्शक के रूप में **मुख्य राजभाषा अधिकारी जी** का यह कथन कि साहित्य हमारी लोक संस्कृति ,परंपराओं और मानवीय संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने के साथ ही हमारी भावनाओं का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी प्रस्तुत करता है, उनका **साहित्य के प्रति गहरा चिंतन दर्शाता** है। मुझे पत्रिका के आगामी अंको की प्रतीक्षा रहेगी।

सत्येन्द्र सिंह
पूर्व वराधि, मध्य रेल,
पुणे मंडल,

विवेकानंद - पत्रों में

एम.के.अग्रवाल

विवेकानंद के जीवन दर्शन, उनके तर्क-बोध, ओजस्वी भाषणों से तो पूरी दुनिया ही परिचित है पर यह सब केवल उनका मस्तिष्क ही है। उनके हृदय को जाने बिना विवेकानंद की पूरी पहचान असंभव ही लगती है। इस लेख में विवेकानंद के हृदय को तलाशते हुए उनके कुछ दुर्लभ पत्रों को पहली बार हिंदी में प्रस्तुत किया जा रहा है जिनसे विवेकानंद के हृदय के भीतर उमड़ती भाव-धारा को भी समझा जा सकेगा ।

1894 में अमेरिका से खेतड़ी (राजस्थान,भारत) के महाराजा को लिखा उनका यह पत्र अत्यंत मार्मिक है :-

केवल मकान ही घर नहीं होता, पत्नी ही उसे घर बनाती है । एक संस्कृत कवि ने कहा है "न गृहं गृहमित्याहुर्गुहिंणी गृहमुच्सते" और यह बात, कितनी सच है भी । जो छत आपकी गर्मी, ठंड और वर्षा से रक्षा करती है, उसे उन खंभो से नहीं पहचाना जाता जो उसे साधते हैं, चाहे चारों ओर कितने भी मजबूत खंभे क्यों न हों किंतु सच्चा खंभा वही होता है जो बीच में होता है और घर का आधार होता है यानि -गृहिणी । इस उदाहरण को लेकर दुनिया में अमेरिका के घर किसी भी घर से तुलना किए जाने पर पीछे नहीं रहेंगे ।

मैंने अमेरिका के घरों के बारे में कई किस्से सुने हैं जैसे लाइसेंस पर चलने वाली आजादी । नारी की खूबियां खो कर महिलाओं द्वारा बदहवास आजादी के नाच में पैरों तले कुचली जाती घर की शांति, खुशियां तथा इसी तरह की और भी बहुत सी बेहूदी बातें किंतु अब एक साल बाद अमेरिका के घरों और अमेरिकन महिलाओं को समझ लेने के बाद इस तरह का अंदाजा लगाना कितना झूठा और बेतुका लगता है। अमेरिकन महिलाओं ! आपके प्रति अपनी कृतज्ञता का ऋण चुकाने के लिए सौ जन्म भी मेरे लिए कम होंगे । आपके प्रति अपनी कृतज्ञता जाहिर करने के लिए मेरे पास शब्द ही नहीं बचे हैं । केवल पूरब की विशालता ही पूरब की कृतज्ञता व्यक्त कर सकती है - हिंद महासागर को स्याही की दवात, सबसे ऊंचे हिमालय पर्वत को कलम, धरती को कागज तथा समय को लेखक बना दिया जाए तो भी आपके प्रति मेरा आभार व्यक्त नहीं किया जा सकेगा।
(शिव महिमा स्त्रोतम से गृहीत)

हृदय

पिछले साल गर्मियों में, मैं इस देश में आया था, दूर-दराज के देश का एक भटकता प्रचारक जिसका कोई नाम नहीं था, शोहरत नहीं थी, अपनी पहचान बनाने की कोई सीख भी नहीं थी-कोई दोस्त नहीं, लाचार और लगभग बदहाली की हालत में था किंतु अमेरिकी महिलाओं ने मुझे दोस्त मान कर पनाह दी, खाना दिया, अपने घर ले गईं और मुझे अपने ही बेटे और भाई जैसा समझा। वे मेरी दोस्त बनीं रही हालांकि उनके पादरी खतरनाक विधर्मी को छोड़ने के लिए समझाने में लगे रहे यहां तक कि उनके पक्के दोस्त भी उन्हें इस अपरिचित परदेसी को छोड़ने के लिए उन्हें उकसाते रहे कि हो सकता है इसका चरित्र भी अच्छा न हो लेकिन उन्होंने इन बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया।

2 मई,1895 को अमेरिका से ही उन्होंने एस. नाम से अपने एक मित्र को जोशीला पत्र लिखा जो यथावत नीचे दिया जा रहा है:-

प्रिय -एस.

सो अब तुमने संसार त्यागने का मन बना लिया है। मुझे आपकी इस इच्छा के प्रति सहानुभूति है । त्याग से बड़ी कोई चीज नहीं है किंतु तुम्हें यह भी कभी नहीं भूलना चाहिए कि जो आप पर आश्रित हैं, और जिनकी कुर्बानी भी कुछ कम नहीं हैं, उनके लिए आपको अपनी इस पसंदीदा चाहत को छोड़ देना चाहिए। रामकृष्ण के उपदेशों और निष्कलंक जीवन को अपना कर अपने परिवार की सुख-शांति का ख्याल रखो। तुम सिर्फ अपना फर्ज पूरा करो और बाकी सब परमात्मा के भरोसे छोड़ दो ।

प्रेम, आदमी और आदमी, आर्य और मलेच्छ, ब्राह्मण और अछूत के बीच यहां तक कि स्त्री और पुरूष के बीच भी कोई फर्क नहीं रहने देता। प्रेम पूरे ब्रह्मांड को ही अपने घर जैसा बना देता है। सच्ची तरक्की धीरे-धीरे होती है पर पक्की होती है। ऐसे जवान लोगों के साथ काम करो जो पूरे समर्पण के साथ भारत के विशाल जन समूह को ऊपर उठाने का एक ही काम कर सकें। उन्हें जागरूक बनाओं, एकजुट करो तथा त्याग की इस भावना से प्रेरित करो- ऐसा केवल भारत के युवा लोग ही कर सकते हैं। दूसरों का अनुसरण करने की भावना पैदा करो, परंतु अपनी आस्था को भी मत छोड़ो। जब तक अपनों से बड़ों की आज्ञा का अनुसरण नहीं किया जाता तब तक स्थिरता भी नहीं आ सकती। अपनी शक्तियों को केंद्रित किए बिना कोई भी बड़ा काम नहीं किया जा सकता। कोलकाता का मठ ही मुख्य केंद्र है तथा इसकी सभी शाखाओं के सदस्यों को एकजुट होकर इस केंद्र के नियमों के अनुसार ही काम करना चाहिए ।

ईर्ष्या और अहंकार को त्याग दो । एकजुट होकर दूसरों के लिए काम करना सीखो। हमारे देश को इसी बात की सबसे अधिक जरूरत है ।

आशीर्वाद सहित तुम्हारा
विवेकानंद

24 मई, 1893 को बंबई से मातृस्वरूपा श्रीमती इंदुमति मित्रा को कई सीखें देते हुए विवेकानंद द्वारा लिखा गया यह पत्र भावुकता के साथ-साथ जागरूकता का भी पाठ पढ़ाता है:-

प्रिय मां (श्रीमती इंदुमति मित्रा)

आपका तथा प्रिय हरिपाद का पत्र पाकर आनंद हुआ। कृपया इस बात का बुरा न मानें कि मैं आपको समय पर जवाब न दे पाया। मैं आपके कल्याण के लिए हमेशा भगवान से प्रार्थना कर रहा हूं। मैं फिलहाल बेलगांव नहीं जा सकता क्योंकि अगली 31 तारीख को मेरे अमेरिका जाने की सभी तैयारियां पूरी हो चुकी हैं। भगवान की जैसी इच्छा हो, मैं अमेरिका और यूरोप की यात्रा से लौटने के बाद आपसे मिलूंगा। अपने को भगवान श्रीकृष्ण की शरण में सौंप दो। हमेशा याद रखो कि हम भगवान के हाथ की कठपुतलियां ही हैं, हमेशा शुद्ध आचरण रखो। सावधान रहो कि मनसा, वाचा और कर्मणा से हम कभी भी पतित न हों। जहां तक आपसे संभव हो, दूसरों का भला ही करो। याद रखो कि एक पत्नी के लिए मन, वचन और कर्म से अपने पति की सेवा करना ही उसका परम कर्तव्य है। जब भी आपको समय मिले रोजाना गीता पढ़ो। आपने अपने को दासी का नाम क्यों दिया है ? वैश्य और शूद्रों को अपने को दास और दासी का नाम क्यों देना चाहिए जबकि ब्राह्मण और क्षत्रिय स्वयं के लिए

देव और देवी लिखते हैं। इसके अलावा जाति जैसे भेदभाव से ही हमारे इन आधुनिक प्रज्ञावान ब्राह्मणों का उदय हुआ है। कौन किसका दास है ? हर कोई तो भगवान हरि का दास है। इसी तरह महिलाओं को अपने उपनाम के लिए अपने पति का ही उपनाम लगाने की पुरानी वैदिक रीति है। उदाहरण के लिए फलां-फलां मित्रा आदि। ज्यादा लिखने की जरूरत नहीं, प्रिय मां बता दूं कि आपकी खुशहाली के लिए मैं लगातार प्रार्थना कर रहा हूं। अमेरिका से हैरत अंगेज चीजों के बारे में भी बताऊंगा। मैं फिलहाल बंबई में ही हूं और 31 तारीख तक यहीं ठहरूंगा। खेतड़ी के महाराजा के निजी सचिव मुझे यहां तक छोड़ने आए हैं।

आशीर्वाद सहित तुम्हारा,
विवेकानंद

05 जनवरी, 1890 को इलाहाबाद से बांग्ला भाषा में श्री ज्ञानेश्वर भट्टाचार्य को लिखे पत्र का हिंदी अनुवाद नीचे दिया जा रहा है जिसमें नैतिकता पर खुल कर लिखा गया है :-

मेरे प्रिय फकीर,

तुमसे कुछ कहना था। याद रखो अब मैं शायद दोबारा तुमसे नहीं मिलूंगा। नैतिकता में भरोसा रखो और बहादुर बनो। ढांढस रखने वाले आदमी बनो । कठोरता से नैतिकता का पालन करो और निराशा में बहादुरी दिखाओ। धार्मिक सिद्धांतों में अपना सिर मत खपाओ। केवल कायर ही पाप करते हैं, बहादुर कभी नहीं। हर किसी से प्रेम करने की कोशिश करो। मजबूत आदमी बनो और जो आपके सबसे नजदीक हैं जैसे रामकृष्णाई और इंदु उन्हें भी नैतिकता संपन्न, बहादुर और संवेदनशील बनाओ। नैतिकता और बहादुरी के अलावा तुम्हारा और कोई धर्म नहीं है। कोई कायरता नहीं, कोई पाप नहीं -- कोई निर्बलता नहीं -- बाकी काम अपने आप होगा।

आपका स्नेही,
विवेकानंद

संकलनकर्ता
सचिव, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी (निर्माण),
मध्य रेल, मुंबई छशिट

अनासक्ति ही समस्त योग साधना की नींव है । हो सकता है कि जिस मनुष्य ने अपना घर छोड़ दिया है, अच्छे वस्त्र पहनना छोड़ दिया है, अच्छा भोजन करना छोड़ दिया है और जो मरूस्थल में जाकर रहने लगा है, वह भी एक घोर विषयासक्त व्यक्ति हो । उसकी एकमात्र सम्पति उसका शरीर ही उसका सर्वस्व हो जाए और वह उसी के सुख के लिए सतत प्रयत्न करें ।

स्वामी विवेकानंद

पॉवर प्वाइंट विवेकानंद

आशा मिश्रा

यूं तो भारत में प्राचीन काल से ही ऋषियों, मुनियों, मीमांसकों और साधु-सन्यासियों की एक लंबी फेहरिस्त रही है पर आधुनिक युग के राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत एक संत या सन्यासी के रूप में तेजोमयी स्वामी विवेकानंद जी का स्थान इस परंपरा में कुछ अलग ही है । अपने ओजस्वी और तेजस्फूर्त विचारों से जिस 'तूफानी सन्यासी' ने पूरी दुनिया को हिलाकर रख दिया था वो किसी पॉवर पाइंट से कम नहीं आंके जा सकते । जिस समय में विवेकानंद जी का जन्म हुआ तब महान भारत गुलाम था। सदियों से चली आ रही परतदर परत गुलामी में भारत का गौरव चूर-चूर हो गया था । सामाजिक और आर्थिक स्थिति जर्जर हो चुकी थी लोगों का मनोबल टूट चुका था - भारत हताश और लाचार था। धर्म दिशाहीन और उन्मादी हो चला था। समाज कई रूढ़ियों, बंदिशों और कुरीतियों में जकड़ा हुआ था । ऐसा नहीं था कि उस दौर में पूरा भारत सो रहा था । अंधकार के क्षितिज से कई महापुरूषों का उदय हुआ जिन्होंने भारत का सोया गौरव जगाने की पूरी कोशिश की पर सभी में समग्रता का अभाव था। जरूरत थी कि कुछ चमत्कार हो, ऐसा तूफान उठे कि सब खर पतवार हवादोज हो जाएं परंतु धरती पकती है और सही वक्त की प्रतीक्षा करती है यह प्रकृति का शाश्वत नियम है । विवेकानंद जी से पहलें शंकराचार्य जी भारत को जोड़ने का उपक्रम कर चुके थे ।

'ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या' और 'अहं ब्रह्मोस्मि' का नारा देने वाले शंकराचार्य जी जब एक बार काशी पहुंचे तो काशी नरेश ने ज्ञान और व्यावहारिकता की परीक्षा लेने की मंशा से अपना हाथी उनके पीछे दौड़ा दिया अब आगे-आगे शंकराचार्य जी और पीछे-पीछे हाथी वे दौड़ कर काशी नरेश की शरण में पहुंचे और चिल्लाने लगे प्रभु ! इस हाथी से मेरे प्राणों की रक्षा कीजिए । काशी नरेश बोले- आप तो साक्षात ब्रह्म हैं । हाथी आपका शरीर कुचल देगा पर आपकी आत्मा तो अजर अमर है फिर प्राणों का मोह क्यों? शरीर और यह जगत तो नश्वर है फिर चिंता किस बात की? यही दरार थी जो भारत वर्ष में धर्म को आसमान से नीचे नहीं उतरने दे रही थी । धर्म और मानवमात्र का सरोकार क्या है यह जानने के सभी दरवाजे बंद थे । क्या केवल ज्ञान से धर्म को जाना जा सकता है या केवल भक्ति से नैया पार लग सकती है । आदमी अपने जीवन में धर्म को अपनाए तो क्यों? इससे पहले भारत में ही बौद्ध और जैन धर्म हिंदू धर्म की सार्वभौमिकता और पाखंड तथा जटिलता पर कई प्रश्न खड़े कर चुके थे । उधर यूरोप से लबालब भरकर भारत आने वाले ईसाई मिशनरियों ने भी धावा बोल रखा था। इस घमासान में हिंदुत्व का ओर-छोर किसी को समझ नहीं आ रहा था। वेदकालीन आर्यवर्त का सूरज ढल चुका था। पौराणिक छल प्रपंच पाखंडों और वाक्छल तथा धर्म की गलत व्याख्या के चलते हिंदू धर्म छोटे-छोटे धर्म संप्रदायों, जाति वर्गों की सीमित संस्कृति के घुटन भरे माहौल में सांस ले रहा था । आम आदमी इस निरर्थक और निर्मम धर्म के प्रति उदासीन था । धर्म के सामने मानवता का बॉनसॉय संस्करण ही उपस्थित था । आर्य समाज के प्रवर्तक के रूप में स्वामी दयानंद सरस्वती आधात पर आधात कर रहे थे पर उनके ज्ञान का दंभ उन्हें विस्तार पाने और जनमानस में समाने से रोक रहा था। भूख, हताश जनता का आखिर ज्ञान से क्या प्रयोजन ? कलकत्ता में राजा राम मोहन राय और केशवचंद्र सेन जैसे समाज सुधारक 'ब्रह्म समाज' के जरिए यद्यपि कई सामाजिक कुरीतियों पर सीधा हल्ला बोल रहे थे पर केवल विधवाओं का दोबारा विवाह करा देने से भारत का समग्र कल्याण संभव नहीं था । थियोसोफिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया के लोग आणिमा सिद्धियों की तलाश में भटक रहे

थे जिनका आम आदमी से कोई सरोकार न था। महाराष्ट्र में भी डॉ. भीमराव आंबेडकर, गोविंद महादेव रानडे, बाल गंगाधर तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, महात्मा ज्योतिबा फुले कई सामाजिक कुरीतियों पर हमले बोल रहे थे पर इससे समग्र हिंदुत्व (भारत में रहने वाले सभी लोग जो भारतीय संस्कृति को मानते हैं) का कुछ खास भला नहीं हो रहा था । जो आर्यवर्त कभी सुदूर उत्तर, पूर्व और पश्चिम तथा दक्षिण में फैला हुआ था उसका खोया गौरव वापस लौटाने के लिए ये कोशिशें पर्याप्त नहीं थीं । धर्म का सारतत्व चाहिए था धर्म की जीवन में उपयोगिता चाहिए थी और सबसे बड़ी चीज तो यह कि धर्म का एक स्पष्ट आधार तलाशना भी जरूरी था-उसके लिए एक विचार दृष्टि या चिंतन की निहायत जरूरत थी ।

दक्षिणेश्वर में साधनारत रहने वाले सिद्ध योगी रामकृष्ण परमहंस यूं तो मां काली की आराधना करते हुए खुद ध्यानमग्न हो जाते थे - कई सिद्धियों के मालिक थे पर इस सबका उपभोग वे स्वयं अपने ही लिए कर सकते थे। उनका मन बार-बार उचाट हो जाता था कि वे सिद्ध-पुरूष हैं, इससे दुनिया को क्या मिलता है ? लोग संत्रस्त हैं, दुखी हैं, बीमार हैं, निर्धन, भूखे और अशिक्षित हैं - आखिर अपनी मुक्ति से दूसरों को क्या मिलेगा? उनका मानना था कि मुक्ति पर सभी का हक होना चाहिए -सबकी मुक्ति में ही उनकी अपनी भी मुक्ति है पर इसका रास्ता क्या है? रास्ता उन्हें मालूम भी था पर बताएं कैसे वे तो अशिक्षित, भोले-भाले और सरल हृदय थे । यह दैविक संयोग ही था कि नरेंद्र के रूप में विवेकानंद जैसे प्रकांड ज्ञानी, ओजस्वी, शक्ति सामर्थ्य से भरे प्रतापी नवयुवक को किसी शक्ति ने ही रामकृष्ण जी से मिलने को प्रेरित किया। रामकृष्ण जी की श्रद्धा से जब यह ज्ञान जुड़ा तो उन्हें अभिव्यक्ति मिल गई वे मूक थे पर मुखरित हो गए। स्वामी विवेकानंद वेद, पुराणों, हिंदी, बांग्ला, अंग्रेजी और संस्कृत के प्रकांडज्ञाता और उच्च शिक्षित थे पर इससे भला दुनिया को क्या मिलता -- यह सब तो उनकी अपनी उपलब्धि थी और केवल अपने ही लिए थी । विवेकानंद ने अपना यही सारा ज्ञान रामकृष्ण जी की श्रद्धा को समर्पित कर दिया और पूरी दुनिया के हो गए। विवेकानंद जी का मानना था कि आदमी को इंसान समझा जाए और समाज में 'मनुष्य' तैयार किए जाएं। वे उसी को धर्म मानते थे जो मनुष्य का कल्याण करता हो। बैठ कर समाधि लगाने और ध्यान में लीन होने को वह व्यक्तिगत उन्नति का अभ्यास मानते थे । धर्म का व्यापक अर्थ वे समाज में मनुष्य मात्र का कल्याण मानते थे । उनका मानना था कि हम साक्षात ईश्वर की सेवा नहीं कर सकते इसीलिए ईश्वर ने अपने को मनुष्य के रूप में हमारे सामने भेजा है -- मनुष्य की सेवा ही ईश्वर की सबसे बड़ी सेवा है। यदि समाज में श्रेष्ठ मनुष्य होंगे तो इससे समाज की उन्नति होगी और पूरे देश की उन्नति होगी तथा राष्ट्र का गौरव बढ़ेगा। यूनान के दार्शनिक अरस्तू ने एक बार कहा था कि यदि दुनिया का हर आदमी दूसरे आदमी की जरूरतों का ध्यान रखे तो हममें से किसी को स्वर्ग की तलाश नहीं करनी पड़ेगी यह पूरी धरती ही स्वर्ग बन जाएगी । स्वामी विवेकानंद धर्मों के आपसी झगड़ों को भुला कर ऐसे ही एक 'वैश्विक धर्म' की कल्पना करते थे जिसमें मनुष्य सबसे ऊंचे पायदान पर हो । इसके लिए यह जरूरी था कि प्रत्येक धर्म के लोग अपनी धार्मिक मान्यताओं के अनुसार अपना आत्मिक विकास करें और मानवता को सुदृढ़ बनाने में अपना योगदान दे क्योंकि हरेक धर्म का अंतिम लक्ष्य यही है । उन्होंने अपना लक्ष्य हासिल करने के लिए सत्यान्वेषण, निर्भीकता और शारीरिक स्वास्थ्य को महत्वपूर्ण माना । शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन में उन्होंने पूरी दुनिया को यह संदेश दिया और पूरी दुनिया ने इस हिंदुत्व की श्रेष्ठता को स्वीकार किया उनकी तेजस्विता को नमन किया ।

राजभाषा अधिकारी (मुख्यालय)
मध्य रेल, मुंबई छशिट

स्वामी विवेकानंद जी का योगदान- आधुनिक भारत का नव निर्माण

मुकेश बत्रा

उतिष्ठत! जाग्रत/प्रायवरान्नितबोधत का उपदेश देने वाले स्वामी विवेकानंद आत्मज्ञानी पुरूष ही नहीं वरन एक सच्चे व श्रेष्ठ देश भक्त भी थे । उनका संदेश -सूरज की तरह जग को करो आलोकित ऊर्जा के उल्लास से सबको करो पुलकित है। संदेश कह रहा है कि स्वामी विवेकानंद जी का आगमन समस्त मानव जाति के लिए ही हुआ था । स्वामी विवेकानंद के विचारों में हमारे देशवासियों में संजीवन का संचार करने का सामर्थ्य निहित है । आज हमारे राष्ट्र जीवन की ऐसी कोई समस्या नहीं है जिनका हल हमें उनकी शिक्षाओं में न मिल पाता हो। स्वामी जी ने हमें उन उपायों तथा साधनों का दिग्दर्शन कराया है, जिसके द्वारा भारत फिर से गत वैभव प्राप्त कर सकता है । कवि की इन पंक्तियों को पढ़े

तुम उन्हें दे दो चुनौती, जो बुझाने पर तुले हैं ।
मैं वो दीपक हूं जिसे खुद आंधियों ने ही जलाया ।।
जिंदगी भर टूटने का डर, झुका मुझको न पाया ।
हारकर खुद मौत ने भी, जन्मदिन मेरा मनाया ।।

स्वामी विवेकानंद ने वेदान्त को पुनर्जवित किया तथा समस्त विश्व में उसका प्रचार करते हुए सर्वत्र चैतन्य भर दिया । स्वामी विवेकानन्द ने भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक भ्रमण किया था व भारतवासियों के विषय में संपूर्ण जानकारी प्राप्त की थी इसलिए वे भारत की प्रमुख समस्याओं पर अधिकारपूर्वक विवेचना करने के विशेष अधिकारी थे । स्वामी विवेकानन्द का कहना था कि तोते के समान अभ्यास करना हमारा आचरण हो गया है। हममे उद्यम की शक्ति का एकदम अभाव है परंतु अब समय आ गया है भारत को उन्नत बनाने का भारत को पुनः जाग्रत करने का । हम सब भारतीय एकत्रित होकर, संगठित होकर भारत को उन्नति के शिखर तक अवश्य पहुंचाएंगे। मित्रो ! पर्वत आपके आत्म विश्वास से ऊंचा नहीं होता क्योंकि जब आप शिखर पर पहुंचेगे तो वह आपके कदमों तले होगा। आशा मनुष्य को मिला सबसे बड़ा उपहार है । उम्मीद ही हमें संघर्ष करना सिखाती है और हम सफलता प्राप्त करते हैं । स्वामी विवेकानंद ने राष्ट्र के पुनः उत्थान के लिए भारतवासियों को संदेश दिया कि हमें दो बातों को त्याग देना चाहिए -- लालसा एवं इर्ष्या। सदा आत्म विश्वास बनाए रखना चाहिए। भारत देश के दो मूल आदर्श हैं - त्याग और सेवा । इन दो क्षेत्रों में बाढ़ ला दो और फिर देखो भारत किस तरह उन्नति के शिखर पर पहुंचेगा । इस समय आवश्यकता है प्रबल कर्मयोग, अपार साहस व हिम्मत की । स्वामी जी का सपना था -शिक्षित समाज का निर्माण करना। स्वामी जी आधुनिक भारत का सपना देखते थे जिसमें प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित हो व अपने पैरों पर खड़ा हो । स्वामी जी का भारतवासियों के लिए एक मात्र संदेश था बढ़े चलो । यदि तुम्हें मानव जीवन प्राप्त हुआ है तो कर्म करते चलो । अपना जीवन दूसरों के हित में लगा दो और कहो कि मुझे अभय प्राप्त हो गया है । दूसरों को भी उपदेश दो- उठो जागो, और जब तक लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाए रूको मत । सदैव बढ़े चलो । स्वामी जी ने हमें जगा दिया - हम ढूंढते थे ईश्वर को मंदिर -मस्जिद -गुरूद्वारे चर्च में । दीन दुखियों में हमें ईश्वर का दर्शन करा दिया ।

वरिष्ठ स्नातकोत्तर शिक्षक (व्याख्याता)
मध्य रेल, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय (अंग्रेजी माध्यम)
भुसावल

स्वामी विवेकानंद -- एक युग पुरूष

सुनीता ल.कटारिया

स्व-विवेक से आगे बढ़ते
आदर्शवाद की मूर्ति गढ़ते
सदैव करते मानव विकास का यत्न
खरे अर्थों में थे भारत-रत्न

सद्‌गुणों के थे भंडार
सभी को उचित राह दिखाई
भांति एक 'रडार'

देश प्रेम एवं स्वाभिमान दृढ़ किया,
सामाजिक जागरण का
सभी में संचार किया ।

परमहंसजी से दीक्षा पाते,
शिकागो में बहनों एवं भाईयो कह
संपूर्ण जगत में एकता की ज्योति जगाते

वसुधैव कुटुंबकम् का पाठ पढ़ाते
आध्यात्मिक ज्ञान से
विश्व को उज्जवल करते ।

जग में भारत का नाम कर,
नैतिक बल से करते ओत-प्रोत
आज भी हैं हमारे प्रेरणा-स्त्रोत।

वरिष्ठ अनुभाग अधिकारी (लेखा)
उप मुख्य बिजली इंजीनियर कार्यालय,
मध्य रेल, माटुंगा

हमारा पहला कर्तव्य यह है कि अपने प्रति घृणा न करें, क्योंकि आगे बढ़ने के लिए आवश्यक है कि पहले हम स्वयं में विश्वास रखें और फिर ईश्वर में । जिसे स्वयं में विश्वास नहीं उसे ईश्वर में कभी भी विश्वास नहीं हो सकता ।

स्वामी विवेकानंद

स्वामी विवेकानंद -व्यक्तित्व एवं कृतित्व

आर.एस. माथुर, "राज"

होनहार विरवान के होत चीकने पात,
coming events cast their shadows before.

उपर्युक्त कहावत स्वामी विवेकानंद के बारे में अक्षरशः सत्य सिद्ध होती है । क्योंकि विवेकांनद जी का जन्म ऐसे समय में हुआ जिस समय हमारा देश भारत राजनीतिक दृष्टि से गुलाम था । राजनीतिक दासता के साथ-साथ देशवासियों का मनोबल भी बहुत दुर्बल हो चुका था। आत्महीनता की आत्मघातक वृत्ति ने देशवासियों को इतना अकर्मण्य, आलसी और भीरू बना दिया था कि वे अपने राष्ट्र के गौरवपूर्ण अतीत के आदर्शों से उदासीन हो चुके थे । पराधीनता में जकड़ा हुआ भारत स्वतंत्रता जैसी दैविक शक्ति से भी उदासीन होकर घोर नैराश्यपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहा था ।

ऐसे नाजुक समय में स्वामी विवेकानंद का जन्म होने से पहले ही भारत के जनमानस ने प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के रूप में 1857 में आजादी पाने के लिए बिगुल बजा दिया था और भारत का हर नागरिक स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए प्राण पण से तत्पर था ।

स्वामी विवेकानंद के व्यक्त्वि में साहस, विवेक, चिंतन, जिज्ञासा जैसे गुण कूट-कूट कर भरे हुए थे । स्वामी जी की यह खासियत थी कि वह हर चीज को कसौटी पर कसकर ही स्वीकार करते थे । उनके श्रद्धेय पिताजी एवं माताजी ने उनमें ये सब संस्कार बचपन में ही घुटी में डालकर पिला दिए थे । स्वामी विवेकानंद के पिता के देहांत के उपरांत उनकी पारिवारिक स्थिति बहुत ही विपन्न हो गई थी क्योंकि घर में कोई दूसरा कमाऊ सदस्य नहीं था । इस स्थिति में भी उन्होंने अपने स्वाभिमान की रक्षा करते हुए सब कुछ सहा ।

स्वामी की गुरू भक्ति एक अनुकरणीय उदाहरण है । उन्होंने गुरू रामकृष्ण परमहंस के सानिध्य में दर्शन जैसे दुरूह विषय का अत्यंत तन्मयता से अध्ययन किया । गुरू ऋण से उबरने के लिए विवेकानंद जी ने रामकृष्ण मिशन जैसे एक अंतर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना करके विश्व में एक महान कीर्तिमान स्थापित किया । इसके साथ ही इन्होंने मानव कल्याण के लिए वेदांत सोसायटी की स्थापना करके मानव जाति पर एक और एहसान किया । विवेकानंद जी ने तत्कालीन निषेधात्मक शिक्षा का विरोध किया और कहां कि मानव का पढ़ना-लिखना ज्ञानार्जन करना है न कि पालतू तोते की तरह रटकर परीक्षा पास करके किसी भी नौकरी में अपना जीवन अर्पित करना । उन्हीं के शब्दों में हमें उन विचारों की अनुभूतियों को एहसास करने की आवश्यकता है, जो जीवन निर्माण, मनुष्य निर्माण तथा चरित्र निमार्ण में सहायक हो । इसी में आगे यह भी बताया है कि हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे चरित्र बने, मानसिक ताकत बढ़े, बुद्धि का विकास हो और जिससे मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सके ।

तत्कालीन देश की परिवर्तित परिस्थितियों तथा मानव रोजगार की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए स्वामी विवेकानंद ने कहा है कि "हमें यांत्रिक और ऐसी सभी शिक्षाओं की आवश्यकता है जिससे उद्योग धंधों की वृद्धि और विकास हो, मनुष्य रोजगार के लिए मारा-मारा फिरने के बजाए अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त कमाई कर सके और आपत्तिकाल के लिए कुछ संचय भी कर सके।"

स्वामी विवेकानंद जी अत्यंत ही आशावादी प्रवृत्ति के थे और उनकी दूरदर्शिता इतनी अधिक थी कि उन्होंने अपने अंतिम समय (1901 से 02) में घोषणा कर दी थी कि भारत एक दिन आजाद हवा में सांस जरूर लेगा लेकिन उसके लिए लगभग 40-50 वर्ष का समय लग सकता है । वे आत्मोपासक तथा सदगुणों के समर्थक थे । उन्होंने विद्यालयों में दी जाने वाली शिाक्षा के बारे में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा 'शिशुओं को शिक्षा देनी है तो उन पर अधिक मात्रा में विश्वास करना होगा ' यह मानना होगा कि प्रत्येक शिशु अनंत ईश्वरीय शक्ति का आधार है । शिशु को शिक्षा देते समय हमें एक और बात का स्मरण रखना चाहिए, और वह यह है कि हमें उन विषयों की जानकारी देनी होगी जिससे वह स्वयं चिंतन करना सीखें । इस मौलिक चिंतन की कमी ही भारत की वर्तमान हीन अवस्था का कारण है । यदि इस प्रकार की शिक्षा दी जाए तो वे मनुष्य बनेंगे तथा जीवन संग्राम में अपनी समस्याओं को सुलझाने में समर्थ होंगे । स्वामी विवेकानंद ने यह भी बताया कि प्रत्येक व्यक्ति के मन में विश्व का अनंत ज्ञान अवस्थित होता है जरूरत है उस ज्ञान को समझने की ।

स्वामी विवेकानंद ने स्त्री शिक्षा, सार्वजनिक शिक्षा तथा आत्म निर्भर बनाने वाली शिक्षा का समर्थन किया। उन्होंने यह बताया कि ब्रह्मचर्य तथा चित्त की एकाग्रता द्वारा विश्व की किसी भी वस्तु को प्राप्त किया जा सकता है ।

स्वामी विवेकानंद ने अपने आदर्श वाक्य 'उत्तिष्ठत, जाग्रत प्राप्यवरान्नि बोधत् अर्थात उठो, जागो और ध्येय की प्राप्ति तक रूको मत' द्वारा लक्ष्य प्राप्ति के लिए सारे विश्व का आह्वान किया जिससे पूरे विश्व में उनकी श्रेष्ठता का डंका बज गया ।

उपर्युक्त जानकारी के साथ यह कहा जा सकता है कि स्वामी विवेकानंद एक विलक्षण, जिज्ञासु, ज्ञानपिपासु, स्वाभिमानी तथा आध्यात्मिक प्रतिभा के धनी युगदृष्टा एक महान संत पुरूष थे । उन्होंने आजीवन मानव कल्याण के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया ।

वरिष्ठ अनुवादक, मुख्यालय
मध्य रेल, मुंबई छशिट

स्वामी विवेकानंद जी की 150वीं जयंती के उपलक्ष्य में भारतीय रेल द्वारा चलाई गई निम्नलिखित 04 विवेक एक्सप्रेस गाड़ियां

1. डिब्रूगढ़ - त्रिवेंद्रम- कन्याकुमारी विवेक एक्सप्रेस (साप्ताहिक) कोकराझार के रास्ते
2. द्वारका-तूतीकोरन विवेक एक्सप्रेस (साप्ताहिक) वाडी के रास्ते
3. हावड़ा - मंगलौर विवेक एक्सप्रेस (साप्ताहिक) पालघाट के रास्ते
4. बांद्रा (ट.) - जम्मूतवी विवेक एक्सप्रेस (साप्ताहिक) मारवाड़-देगाना-रतनगढ़-जाखल-लुधियाना के रास्ते

विश्वचेता स्वामी विवेकानंद

ऋषि कुमार मिश्र

अमेरिका के शहर शिकागो की विश्वधर्म महासभा में 11 सितंबर 1893 ई. को दिए अपने व्याख्यान में स्वामी विवेकानंद ने भारतीय वैदिक चिंतन की पीठिका पर विश्वधर्म का जो स्वरूप चित्रित किया उसने अपने-अपने धर्म की प्रधानता का प्रतिपादन करने के उद्देश्य से धर्म महासभा में पहुंचे पाश्चात्य जगत के विभिन्न धर्मावलम्बियों को चमत्कृत कर दिया । साम्प्रदायिकता, हठधर्मिता और वीभत्स धर्मान्धता में डूबे पश्चिमी धर्म गुरूओं के लिए स्वामी जी के वेद प्रणीत विचार एक नया अनुभव था । व्याख्यान के प्रारंभ में स्वामी जी के श्रीमुख से अमेरिका वासी बहनों तथा भाईयों का संबोधन सुनकर महासभा का विशाल पंडाल काफी देर तक तालियों की गड़गड़ाहट से गूंजता रहा । माता पृथ्वी पुत्रों अहं पृथिव्या की भावना के अनुकूल विश्वबंधुत्व की भारतीय आध्यात्मिक उदारता से ओतप्रोत इस संबोधन ने सभी को विमुग्ध कर दिया । 27 सितंबर तक चली धर्म महासभा के व्याख्यानों में स्वामी विवेकानंद ने अपौरूषेय वेदों में वर्णित धार्मिक सिद्धांतों की सार्वभौमिकता प्रमाणित कर दी । वेदों की अपौरूषेयता (अनादि अनंत) की वैज्ञानिक सिद्धता का उद्घाटन करते हुए विवेकानंद जी ने कहा 'वेदों का अर्थ कोई पुस्तक नहीं है' । वेदों का अर्थ है भिन्न-भिन्न कालों में भिन्न-भिन्न व्यक्तियों द्वारा आविष्कृत आध्यात्मिक सत्यों का संचित कोष । जिस प्रकार गुरूत्वाकर्षण का सिद्धांत मनुष्यों का पता लगने से पूर्व से ही अपना काम करता चला आ रहा था और आज यदि मनुष्य जाति उसे भूल भी जाए तो भी वह नियम अपना काम करता ही रहेगा । ठीक वही बात आध्यात्मिक जगत पर शासन करने वाले नियमों के संबंध में भी है । एक आत्मा का दूसरी आत्मा के साथ और जीवात्मा का आत्माओं के परमपिता के साथ जो नैतिक और आध्यात्मिक संबंध है, वे उनके आविष्कार के पूर्व भी थे और यदि हम भूल भी जाएं तो भी बने रहेंगे । सभी जीवात्माओं के परस्पर स्वाभाविक संबंधों पर विश्वास करने के कारण वैदिक धर्म ही सनातन धर्म है । अतः समस्त मानव जाति द्वारा अनुकरणीय है । स्वामी जी ने धर्म महासभा के मंच से घोषित किया मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करता हूं जिसने संसार को सहिष्णुता तथा सर्वभौम स्वीकृति, दोनों की ही शिक्षा दी है । हम लोग सब धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते, वरन समस्त धर्मों को सच्चा मानकर स्वीकार करते हैं । मुझे एक ऐसे देश का व्यक्ति होने का अभिमान है, जिसने इस पृथ्वी के समस्त धर्मों और विश्व के उत्पीड़ितों और शरणार्थियों को आश्रय दिया है ।

स्वामी विवेकानंद ने वेदों में निबद्ध आध्यात्मिक ज्ञान की सार्वभौमिकता का प्रतिपादन करने से पूर्व समस्त वेदों का प्रागैतिहासिक युग से चले आ रहे पारसी और यहूदी धर्मों का तथा बौद्धों व जैनियों के धार्मिक सिद्धांतों का गहन अध्ययन परीक्षण किया । निष्कर्षतः उन्होंने प्रतिपादित किया कि विभिन्नता में एकता यही प्रकृति की रचना है । केवल वैदिक ऋषियों ने ही इसे भलीभाति पहचाना है । अन्य धर्मों में कुछ निर्दिष्ट मतवाद विधिबद्ध कर दिए गए हैं और सारे समाज को उन्हें मानना अनिवार्य कर दिया गया है । वे तो सारे समाज के सामने केवल एक ही नाप की कमीज रख देते हैं जो सबके शरीर में जबरदस्ती ठीक होनी चाहिए । यदि वह कमीज किसी के शरीर में ठीक नहीं बैठती तो उसे बिना कमीज नंगे बदन रहना होगा। वैदिक ज्ञान कहता है कि निरपेक्ष ब्रह्मत्व की उपलब्धि, धारणा या प्रकाश केवल सापेक्ष के सहारे हो सकता है । अतः मूर्तियां, क्रॉस या चांद तो केवल आध्यात्मिक उन्नति के सहायक रूप है । मानो वे बहुत सी खूटियां हैं जिनमें आध्यात्मिक भावनाएं टांगी जाती हैं । ऐसी बात भी नहीं है कि प्रत्येक के लिए इन साधनों की आवश्यकता हो ही, पर बहुतों के लिए ये आवश्यक हुआ करते है । जिनको अपने लिए इन साधनों की सहायता की आवश्यकता नहीं रहती, उन्हें यह कहने का कोई अधिकार नहीं है कि इन साधनों का आश्रय लेना अनुचित है ।

वस्तुतः समस्त धर्म जगत भिन्न-भिन्न रूचिवाले स्त्री पुरूषों का विभिन्न अवस्थाओं एवं परिस्थितियों में से होते हुए ईश्वर लाभ के उस एक ही लक्ष्य की ओर यात्रा करना है, अग्रसर होना है । प्रत्येक धर्म जड़भाव संपन्न मानव को ब्रह्म में परिणत करने में प्रयत्नशील है और वहीं ईश्वर इन समस्त धर्मों का प्रेरक है । तो फिर ये सब धर्म इतने परस्पर विरोधी क्यों हैं ? स्वामी विवेकानंद जी का कहना है कि ये विरोध केवल आभास मात्र हैं, वास्तविक नहीं । विभिन्न अवस्थापन्न, भिन्न-भिन्न प्रकृति वाले मनुष्यों को उपयोगी होने के लिए उस एक ही सत्य ने इस प्रकार परस्पर विरूद्ध भाव धारण किया है, जैसे विभिन्न नदियां भिन्न-भिन्न स्रोतों से निकल कर समुद्र में मिल जाती है , उसी प्रकार भिन्न-भिन्न रूचि के अनुसार विभिन्न टेढे-मेढ़े अथवा सीधे रास्ते से जाने वाले लोग अन्ततः उसी ईश्वरीय सत्ता में विलीन हो जाते हैं :-

रूचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिल नाना पथ जुषाम ।
नृणामेको गम्यस्वमसि पचसामर्झाव इवे ।।

गीता में कृष्ण द्वारा अर्जुन को भी लगभग यही उपदेश दिया गया है

ये यथा मां प्रपद्ययन्ते तांस्तथैव मजाम्यहम ।
मन वार्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ।।

(जो कोई मेरी ओर आता है -चाहे किसी प्रकार से हो मैं उसको प्राप्त होता हूं । लोग भिन्न-भिन्न मार्ग द्वारा प्रयत्न करते हुए अन्त में मेरी ओर ही आते हैं ।)

अपने-अपने धर्म को दूसरे धर्मों से श्रेष्ठ प्रतिपादित करने में जुटे विभिन्न धर्मावलम्बियों को शांत करने के लिए विवेकानंद जी समुद्र और कुंएं वाले मेंढक की निम्न कहानी सुनाते थें - -

एक कुएं में बहुत समय से एक मेंढक रहता था । वह वहीं पैदा हुआ था और वहीं उसका पालन-पोषण हुआ था । फिर भी वह मेंढक छोटा ही था । एक दिन दूसरा मेंढक, जो समुद्र में रहता था, वहां आया और कुएं में गिर पड़ा। तुम कहां से आए हो? कुंए वाले मेंढक ने समुद्र वाले मेंढक से पूछा । मैं समुद्र से आया हूं, समुद्र वाले मेंढक ने बताया । समुद्र भला कितना बड़ा है? क्या वह उतना ही बड़ा है,जितना मेरा यह कुंआ? यह कहते हुए कुएं वाले मेंढक ने कुंए में एक किनारे से दूसरे किनारे तक छलांग मारी । तब उस कुएं वाले मेंढक ने एक दूसरी छलांग मारी और पूछा - तो क्या तुम्हारा समुद्र इतना बड़ा है ? समुद्र वाले मेंढक ने कहा, तुम कैसी बेवकूफी की बात कर रहे हो? क्या समुद्र की तुलना तुम्हारे कुंए से हो सकती है? अब तो कुए वाले मेंढक ने कहा जा, जा । मेरे कुंए से बढ़कर और कुछ हो ही नहीं सकता । संसार में इससे बड़ा और कुछ नहीं है । झूठा कहीं का? अरे ! इसे बाहर निकाल दो ।

धार्मिक मामलों में यह कठिनाई सदैव रही है और आज भी बनी हुई है । हिंदू अपने क्षुद्र कुएं में बैठा यही समझता है कि उसका कुआं ही संपूर्ण संसार है । ईसाई भी अपने क्षुद्र कुएं में बैठे हुए यहीं समझता है कि सारा संसार उसी कुएं में है । मुसलमान भी अपने क्षुद्र कुएं में बैठा हुआ उसी को सारा ब्रह्मांड मानता है ।

स्वामी विवेकानंद जैसे विश्वचेता महापुरूषों ने वसुधैव कुटुम्बकम् की उदात्त भावना से धार्मिक कटुताओं का शमन करने के लिए अनवरत प्रयास किया है। आज, विश्व कल्याण हेतु उनकी शिक्षाओं के प्रचार-प्रसार की महती आवश्यकता है ।

वरिष्ठ अनुभाग अधिकारी (लेखा)
यातायात लेखा कार्यालय, मध्य रेल मुंबई छशिट

आज भारत धन्य हो गया

सत्यवीर सिंह

भगवान भास्कर आ रहे उत्तर की ओर
मनाने की मकर संक्रांति तैयारी हो रही थी पुरजोर ।
12 जनवरी, 1863 का दिन था बहुत महान
कोलकाता में भुवनेश्वरी विश्वनाथ के घर जन्मा नन्हा मेहमान ।
सारा जहां पुलकित हो गया
आज भारत धन्य हो गया (1)

जन्म से गंभीर, ज्ञानपिपासु, जिज्ञासावान
बाल नरेंद्र कहलाया प्रतिभावान ।
आदरणीय गुरूजनों की कृपा से परिपूर्ण
अपनी सभी परीक्षाएं कर रहा था उत्तीर्ण ।
चलते-चलते समय भी चूर हो गया
आज भारत धन्य हो गया । (2)

अठारहवे बसंत में मिले गुरू परमहंस
शिष्य की वेदना का मिटाना चाहते थे दंश ।
मां काली की साधना करो वत्स
दुख सब मिट जाएंगे नहीं रहेगा कोई कष्ट ।
गुरू की आज्ञा शिरोधार्य करके कल्याण हो गया
आज भारत धन्य हो गया । (3)

भक्त की साधना से प्रसन्न हो मां काली ने दिए दर्शन
कहा मांग लो जी भरके मेरे नंदन ।
सोचा नरेंद्र ने सारा संसार तो है क्षण भंगुर
ऐसा कुछ मांगू जो रहे सदा सुंदर ।
चिंतन करते-करते ही विवेक जागृत हो गया
आज भारत धन्य हो गया । (4)

हे मां मैं हूं तुच्छ, नहीं है इस क्षणभंगुर संसार का ज्ञान
हो कृपा तो दे दो मुझे विवेक, वैराग्य और ज्ञान का वरदान ।
एवमस्तु कह माता हो गई अंतर्ध्यान
पल भर में ही दे गई असीमित ज्ञान ।
आज भारत धन्य हो गया । (5)

गुरू ऋण से उबरने की थी भारी तमन्ना
कर दी रामकृष्ण मिशन, अद्वैतवाद और वेदांत की स्थापना ।
देश विदेश घूमकर दिया यह संदेश
उठो, जागो और प्राप्त करो अपना उद्देश्य ।
भारत ही नहीं सारा संसार इनका ऋणी हो गया
आज भारत धन्य हो गया । (6)

वर्ष 1863 में अमेरिका के शिकागो में विश्वधर्म सम्मेलन हो रहा
भारत को ना बुलाकर अमेरिका खुश हो रहा
धन्य थे विवेकानंद वीर साहस से भरपूर
पानी के ही जहाज से चले मंजिल की ओर ।
पहुंचे अमेरिका तो गजब हो गया ।
आज भारत धन्य हो गया । (7)

शिकागो की गलियों की छानी ऐसी धूल
जहां-जहां गए विवेक हो गए सब भारत के अनुकूल ।
भरी विश्वधर्म सम्मेलन में हुंकार
ईश्वर ही हो सकता है पूरबी और पश्चिमी सभ्यता का मजबूत आधार ।
सुनकर यह दिव्य वाणी सम्मेलन मंत्र मुग्ध हो गया ।
आज भारत धन्य हो गया । (8)

युवावस्था से बढ़ रहे प्रौढ़ता की ओर
फिर भी मिशन को निरंतर फैला रहे चहुंओर ।
देश-विदेश का कर देशाटन पहुंचे अमरनाथ
जहां विराजते हैं सकल जग के नाथ ।
बाबा बर्फानी के दर्शन कर उनका जीवन धन्य हो गया ।
आज भारत धन्य हो गया । (9)

दिन-दिन तन क्षीण हो रहा
फिर भी साहसी वीर नए-नए सपने संजो रहा ।
4 जुलाई, 1902 को महा अनर्थ हो गया ।
39 वर्ष की अल्पायु में ही महामनीषी संसार से विदा हो गया ।
मानव तो मानव हिमालय भी मौन हो गया
आज भारत विपन्न हो गया । (10)

द्वारा श्री नाहर सिंह,
मुख्य बुकिंग पर्यवेक्षक
मानखुर्द स्टेशन, मध्य रेल मुंबई

सभ्यता जितनी नीची होती है, इंद्रियों की शक्ति उतनी अधिक होती है । जीव जितना ऊंचा होता है, इंद्रिय सुख का आकर्षण उतना ही कम होता है। कुत्ता भोजन खा सकता है, पर तत्वदर्शन पर विचार करने के अद्भुत आनंद को नही समझ सकता। तुम बुद्धि द्वारा जिस अनूठे आनंद को प्राप्त करते हो, वह उससे वंचित रहता है। इंद्रिय सुख बड़ी वस्तु है पर उससे भी बड़ी वस्तु वह सुख है जो बुद्धि से प्राप्त होता है ।

स्वामी विवेकानंद

शक्ति उपासक -- विवेकानंद

श्याम नाथ पांडेय

विवेकानंद को शक्ति उपासक के रूप में प्रस्तुत करने से पहले उनके मस्तिष्क में शक्ति का आशय क्या था इसको समझना जरूरी है । जहां तक मैंने विवेकानंद जी के बारे में कुछ पुस्तकों के अध्ययन से पाया है कि उन्होंने शक्ति को दैवीय शक्ति, आत्म शक्ति और जन शक्ति के रूप मे ंदेखा तथा समय और आवश्यकता के हिसाब से उसे प्रयोग किया और प्रयोग करने के लिए शिक्षा भी दी ।

दैवीय शक्ति के रूप में जैसा सर्वविदित है कि रामकृष्ण परमहंस उनके गुरू थे और वे काली माँ के अनन्य भक्त थे । इसलिए विवेकानंद की भी मां काली में अटूट आस्था थी परंतु यह आस्था उन्होंने अंधविश्वास के रूप में स्वीकार नहीं की पहले देखा, समझा, तर्क वितर्क के बाद मां काली के समीप आने पर उन्हें जो ज्ञान बोध हुआ और उसे उन्होंने महसूस किया उसी के बाद दैवीय शक्ति को स्वीकार किया । इस संबंध में उन्होंने लिखा है कि काली पूजा मेरी सनक है यह दूसरेां पर बाध्य नहीं । रामकृष्ण परमहंस मां काली के भक्त होने के साथ-साथ उनके हृदय में समूची मानव जाति के उत्थान के लिए पीड़ितों की पीड़ा दूर करने, असहायों की मदद करने तथा दीन दुखियों की सेवा करने के लिए काफी पीड़ा थी । वे मानव जाति एवं अन्य जीवों में ही भगवान नारायण को देखा करते थे । इसके लिए वे जीवन भर काफी प्रयत्नशील भी रहे । इसके लिए जब विवेकानंद ने वैराग्य और एकान्त में साधना की बात रामकृष्ण परमहंस के सामने रखी तो उन्होंने उन्हें काफी कठोरता से डांटा और मानव जाति की सेवा और उनसे कल्याण के लिए जीवन समर्पित करने का लक्ष्य रखने का आदेश दिया । विवेकानंद जी ने अपनी अंतिम सांस लेने तक इसका बखूबी निर्वाह किया। दलितों, दीन दुखियों, असहायों के प्रति उनके हृदय में काफी करूणा थी और उनके उत्थान के लिए वे अंत तक प्रयासरत थे ।

आत्मशक्ति इसके बाद विवेकानंद जी ने आत्म शक्ति को सर्वोपरि माना, बिना आत्मशक्ति के कोई भी कार्य संभव नहीं है और ऐसा कोई कार्य नहीं है जो आत्मशक्ति से पूरा न किया जा सके । इसका सबसे बड़ा उदाहरण उनके जीवन का है जब उन्होंने शिकागो में विश्व धर्म सम्मेलन में जाने का निश्चय किया। यद्यपि उनके पास किसी भी प्रकार का निमंत्रण नहीं था और न ही साधन, किंतु निर्धन और दलित वर्ग के कष्टों ने उन्हें व्यग्र कर दिया था । वह भारतीय गौरव **को** दूरस्थ देशों की यात्रा करके वहां तक पहुंचना चाहते थे इसलिए यह अपनी बात इस धर्म सम्मेलन में रखना चाहते थे । भारत की सांस्कृतिक विजय की घोषणा करने के लिए 31 मई, 1893 को मुंबई से चल कर शिकागो पहुंचे । वहां एक वृद्ध महिला के प्रयास से विवकानंद जी को शिकागो सम्मेलन में सबसे अंत में 5 मिनट बोलने का अवसर दिया गया । इनकी वाणी ने ऐसा जादू कर दिया कि श्रोता कई घंटे बीत जाने के बाद भी व्याख्यान के रस में डूबे रहे । सत्रह दिन तक चलने वाले इस धर्म सम्मेलन में विवेकानंद जी ने 10-12 बार अपने विचार प्रकट किए । यह था उनकी आत्मशक्ति का परिणाम कि भारत की संस्कृति की छाप पूरी दुनिया के नक्शे पर छा गई और जो संदेश उन्हें भारत की तरफ से दुनिया को देना था, देकर ही चैन लिया । इसके बाद जनशक्ति और कर्मशक्ति ने उनके जीवन पर काफी प्रभाव डाला और इसके लिए उन्होंने व्यापक प्रचार किया और शिक्षा दी ।

जनशक्ति के बारे में उनका विचार था कि यदि जनता एक जुट होकर किसी कार्य को पूरा करने का बीड़ा उठा ले और अनुशासित तरीके से उसे पूरा करने का प्रयास करें तो सफलता निश्चित है । यह विचार उनके मन में देश की गुलामी को लेकर आया । देश की जनता को एकजुट होकर परतत्रंता के खिलाफ लड़ने के लिए तैयार करने हेतु जनता को जनशक्ति क्या है, बताने का कार्य किया । उनका यह मानना था कि गुलामी ही सबसे बड़ा अभिशाप है जिसने लोगों को कायर, आलसी और भयग्रस्त बना दिया है । इसके लिए उन्होंने यहां तक कहने में भी संकोच नहीं किया कि इतिहास चंद लोगों से ही लिखा जाता है बाकी लोग तो दर्शक मात्र होते हैं इसलिए उन्होंने कहा कि गीता का उपदेश कायरों के लिए नहीं था ।

गीता का उद्देश्य वीरों और जिनको कुछ करने की इच्छा होती है उनके लिए हैं । अत्याचार, अन्याय को सहने वाले अगर कुछ कर नहीं सकते तो कम से कम प्रतिरोध करने का अधिकार तो है परंतु वे कमजोर के साथ-साथ कायर भी हो गए हैं । इसलिए प्रतिरोध करने का साहस भी नहीं जुटा पा रहे हैं । राष्ट्र सबसे बड़ा देवता है और राष्ट्र की आजादी कायरों से नहीं मिल सकती इसके लिए साहसी और वीरों की आवश्यकता है भले ही ऐसे लोग मुट्ठी भर हो देश को आजादी मिल कर रहेगी । उन्होंने एक जगह पर कहा भी है कि मुझे अकर्मण्य और चापलूसों का झुंड नहीं चाहिए । भले ही पूरे जीवन में मुझे आधा दर्जन लोग ही मिल पाएं वहीं मेरे लिए लाखों के समान है ।

कर्मशक्ति विवेकानंद ने स्वदेश लौटकर 'अखंड राष्ट्रीय एकता स्थापित करना' अपना प्रधान जीवनोद्देश्य बनाया । 1908 से गुप्त क्रांति के जो संगठन बने उनकी मुख्य प्रेरणा विवेकानंद की देन थी । कर्मशक्ति को अपने इन विचारों से व्यक्त किया है । मात्र बातों से कुछ होना जाना नहीं है, जिसके मन में साहस है, वही मेरा साथी बने, मुझे और किसी की आवश्यकता नहीं है । जगदंबा की कृपा से मैं अकेला हीं एक लाख के बराबर हूं तथा स्वयं ही तीन लाख के बराबर बन जाऊंगा। दूसरी जगह वो कहते है कि मेरे गुरूदेव ने जो कर्तव्य का बोझ मेरे कंधों पर छोड़ा है, उसे निष्पादित करने का मैं भरसक प्रयत्न कर रहा हूं इसके लिए मैं अपने आप से संतुष्ट हूं चाहे मेरा प्रयास सम्रग रूप से कार्य में परिणत हुआ हो या नहीं, मैंने प्रयास किया है इससे मैं संतुष्ट हूं । यथोचित कर्म करने में व्यक्ति को इस चक्र में नहीं पड़ना चाहिए कि परिणाम सकारात्मक ही मिलेंगे, यदि ऐसा सोचकर कार्य करना चाहेंगे तो संभवतः कार्य की शुरूआत ही न हो सके । हताशा में असफलता के सिवाय कुछ नहीं मिलेगा । इसलिए कार्य को प्रारंभ करना ही जीवन का मूल उद्देश्य होना चाहिए सफलता-असफलता तो उसके दो पहलू हैं, एक तो मिलना सुनिश्चित है ।

मेरा जन-जन से अनुरोध है कि विवेकानंद जी के सिद्धांतों, विचारों और उपदेशों को अपनाकर मानव और राष्ट्र कल्याण के लिए कार्य करें । जीवन में हताशा को कदापि स्थान न दें सकारात्मकता के बिना मंजिल नहीं मिलती । क्या तुम जानते हो कि वास्तविक शक्ति या शक्ति का पुजारी कौन है ? जो यह जानता है कि जगत में सर्वव्यापक महाशक्ति ईश्वर ही है और जो उपयुक्त मानता है वह शक्ति का पुजारी है ।

अंत में मैं यह कहना चाहता हूं कि ऐसी विभूति के लिए मैं और मेरी लेखनी ने कुछ विचार प्रकट करने का साहस किया यही मेरे लिए बहुत है ।

वरिष्ठ अनुवादक,
राजभाषा विभाग, मध्य रेल, मुंबई छशिट

महिला स्वातंत्र्य और विवेकानंद

श्रीमती वंदना दुबे

स्वामी विवेकानंद जी का पूरा जीवन ही मातृशक्ति की उपासना में गया था । अत: समाज में महिलाओं के उत्थान और स्वतंत्रता के बारे में उनका एक निश्चित विचार था । वेदांत के प्रकांड विद्धान विवेकानंद जी जब सृष्टि के हर जीव में उसी एक ब्रह्म का निवास मानते थे तो महिलाएं भी उनकी दृष्टि में निकृष्ट, निम्न अथवा हेय नहीं थी । स्त्री और पुरूष के बीच लिंग भेद को लेकर उनके मन में कभी कोई भेदभाव नहीं था । वैदिक काल तक भारतीय संस्कृति में महिलाओं को पुरूषों की बराबरी का ही दर्जा हासिल था । विवेकानंद जी गार्गी मैत्रेयी, लोपमुद्रा जैसी विदुषी महिलाओं की उपलब्धियों के प्रति हमेशा नतमस्तक और गौरवान्वित रहे । स्वामीजी ने चीन, जापान, लंका आदि कई देशों की महिलाओं को देखा उन्हें इस बात से प्रसन्नता हुई कि उन देशों में राष्ट्र निर्माण में महिलाओं की भी समान भागीदारी थी । अपने यूरोप प्रवास के दौरान भी अमेरिका, इंगलैंड और फ्रांस में कई महिलाएं उनके संपर्क में आईं जिनसे वे अत्यंत प्रभावित हुए । कई महिलाओं के तो वे आजीवन ऋणी भी रहे जिन्होंने मुश्किल के दिनों में स्वामी को सहयोग दिया था । उन्हें इस बात से प्रसन्नता होती थी कि विदेशों में महिलाएं शिक्षित, स्वस्थ, स्वतंत्र और आत्म निर्भर हैं, किंतु भारत में महिलाओं के पिछड़ेपन पर उन्हें तरस भी आता था । उस समय बंगाल के कई महिला सशक्तिकरण अभियानों ने विवेकानंद जी को प्रोत्साहित भी किया था पर वह सभी अंग्रेजी संस्कृति से प्रभावित थे । विवेकानंद जी उस मिट्टी के बने थे कि वे किसी भी चीज को ठोक बजा कर ही ग्रहण करते थे चाहे वह साक्षात भगवान ही क्यों न हों ? महिला स्वतंत्रता को लेकर भी विवेकानंद जी की अपनी अलग सोच थी । वह पश्चिम की सभी अच्छाईयों को ग्रहण करना चाहते थे पर भारतीयता को डुबोने की शर्त पर नहीं । उनका मानना था कि भारतीय समाज में भी महिलाओं को समानता का दर्जा मिले, वे शिक्षित हों, स्वतंत्र हों तथा आर्थिक सामाजिक रूप से आत्मनिर्भर भी बनें जिससे राष्ट्र निर्माण में देश की इस आधी आबादी का भी योगदान हो किंतु दूसरी ओर वह भारत जैसे सांस्कृतिक देश में महिला स्वातंत्र्य की अतिरंजकता के खतरों से भी वाकिफ थे । वह महिलाओं की स्वतंत्रता के तो पूरे पक्षधर थे पर नैतिक मूल्यों को दांव पर लगाकर कदापि नहीं ।

अपने प्रवास के दौरान स्वामीजी ने देखा था कि महिलाओं ने आजादी तो पाई है पर घर टूट गए हैं और समाज बिखर गया है । बच्चे चर्च के हवाले कर दिए गए या बोर्डिंग अथवा कान्वेंट में ठूंस दिए गए -- आजादी मिली पर भारी कीमत भी चुकानी पड़ी । बाद में अमेरिका से ही प्रकाशित The Feminine mystique, The second stage और Toronto star तथा Break through जैसी पुस्तकों ने आजादी की हकीकत बयान कर दुनिया को भौंचक्का कर दिया । सिस्टर निवेदिता ने एक स्थान पर लिखा भी है कि वह भविष्य की भारतीय नारी को प्राचीन शक्ति से अलग करने की कल्पना भी नहीं कर सकती । सब समझ गए थे कि वही शिक्षा आदर्श होगी जो संपूर्ण भारतीय सामाजिक व्यवस्था के प्रत्यक्ष परिवर्तन को कम से कम प्रभावित करेगी । वह पुरूषों के समान स्त्रियों के लिए भी आध्यात्मिकता को जीवन का अंतिम लक्ष्य मानते थे । ईश्वर ने स्त्री और पुरूष दोनों को ही अलग-अलग गुण दिए हैं जिससे कोई किसी की बराबरी नहीं कर सकता अत: संघर्ष की जगह सामंजस्य को ही उन्होंने सामाजिक विकास का सही रास्ता माना ।

कनिष्ठ अनुवादक,
राजभाषा विभाग, मध्य रेल, मुंबई छशिट

भारत के सपूत -- स्वामी विवेकानंद जी

डी.के.सोनी (धीरेंद्र)

हुआ शिकागो में अधिवेशन,
शून्य पर प्रकट किए विचार ।
हम भारत के भारतीय हैं,
हिंदी है मेरा संस्कार ।।
बिना थके बिना अटके-भटके
एक ब्रह्मचारी ने किया आगाज ।
राजभाषा है जान हमारी,
हिंदी है जहां सिर का ताज ।।
दिया अखंड अनुपम अनुभव,
विद्या विवेक बुद्धि सागर ने ।
कोई नही था सानी उनका
बने आदर्श आज घर-घर में ।
अपनी वाक चतुरता से,
विश्व को आश्चर्यचकित किया ।
नरेंद्रनाथ को गुरू रामकृष्ण ने,
विवेकानंद का नाम दिया ।।
शून्य की खोज हुई भारत में,
ऐसे-ऐसे गणितज्ञ जहां ।
शून्य क्या है, शून्य कहां है,
इसका मतलब मिला यहां ।
स्वामी जी ने भारतीय युवा को
यौवन रक्षा का पाठ पढ़ाया ।
ध्यान केंद्रित कर चिंतन करना,
सफल जीवन का ज्ञान सिखाया ।।
गर जीना है सुखमय जीवन,
स्वामी जी का अनुसरण करों ।।
हर एक युवा हो स्वामी जैसा,
ऐसा ओज भारत के कण-कण में भरो ।।

प्रवर लोको प्रशिक्षक (डीजल),
क्षेत्रीय रेल प्रशिक्षण सस्थान मध्य रेल, भुसावल

स्वामी विवेकानंद का शिक्षा दर्शन

वेद प्रकाश

माता शत्रु, पिता वैरी, यो न बालो पाठितः
सः न शोभते सभामध्ये, हंस मध्ये वको यथा ।।

भावार्थ : बालक को शिक्षा न दिलाने वाली माता शत्रु होती है और पिता वैरी (दुश्मन) होता है। क्योंकि ऐसे अनपढ़ बालक की समाज में वैसी स्थिति होती है जैसी हंसों के समूह में एक बगुले की स्थिति होती है अर्थात बहुत ही शर्मनाक स्थिति होती है ।

संस्कृत के उपर्युक्त श्लोक में बताया गया है कि एक अशिक्षित व्यक्ति की स्थिति कैसी होती है । सनातन काल से हमारी संस्कृति ज्ञान से ओतप्रोत रही है । विदेशों से लोग भी हमारी संस्कृति का अध्ययन करने के लिए हमेशा भारत भ्रमण पर आते रहे हैं । इनमें इब्नबतूता, मार्कोपोलो तथा चीन के ह्वेन सांग एवं मेगस्थनीज का नाम काफी प्रसिद्ध है । इन यायावरों ने न सिर्फ देशाटन किया बल्कि देश-विदेश की संस्कृति, सभ्यता, वहां के रहन-सहन, सामाजिक एवं राजनीतिक परिवेश का अत्यंत गंभीरता से अध्ययन एवं चिंतन किया और अपने उस अध्ययन से सारे संसार को लाभान्वित किया ।

भारतीय संस्कृति में शिक्षा का भारी महत्व है । यह शिक्षा बंधनों से मुक्ति प्रदान करने का एक साधन है । शिक्षा के द्वारा मनुष्य अपने प्राकृत गुण और स्वभाव में सुधार करके एक सभ्य और सुसंकृत नागरिक का जीवन बिता सकता है । एक अंग्रेजी शिक्षा शास्त्री ने तो यहां तक लिखा है कि शिक्षा हमारे दैनिक व्यवहारों को नियंत्रित करती है और इसमें निहित अनंत शक्तियों के परिष्करण तथा परिमार्जन का महत्वपूर्ण कार्य करती है । शिक्षा ही वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य संस्कारवान, ज्ञानवान तथा सभ्य नागरिक बनता है और अपने स्वयं की अनुभूति करके आत्म साक्षात्कार की ओर बढ़ता है। यदि यह कह दिया जाए कि शिक्षा मनुष्य को बर्बर प्रवृत्ति से हटाकर मनुष्य से देवता बनाती है तो कोई अतिश्योक्ति न होगी ।

स्वामी विवेकानंद ने बताया है कि विश्व का अनंत ज्ञान हमारे अवचेतन में अवस्थित है किंतु हमारे ऊपर एक आवरण है जिसके फलस्वरूप हम उस ज्ञान को समझ नहीं पा रहे हैं । बालकों के पालन पोषण के संबंध में विवेकानंद जी ने पौधों का उदाहरण देते हुए कहा कि पौधा अपना विकास, अपनी प्रकृति एवं वातावरण के अनुसार ही कर सकता है, पौधों को आप बढ़ा नहीं सकते, हम उसके विकास के लिए उचित व्यवस्था यथा जमीन पोली करना, खाद, पानी और प्रकाश की व्यवस्था कर सकते हैं । स्वामी विवेकानंद जी ने अध्यापकों को भी बताया है कि वे छात्रों का विश्वास प्राप्त करें और उन्हें अपना प्रेम, सहयोग एवं सहानुभूति प्रदान करें । स्वामी जी ने विद्यार्थियों को दंड देना उन्हें अपमानित करना, उनकी भर्त्सना करना, फटकारना, दुत्कारना आदि बातों का तीव्र विरोध करते हुए कहा कि इस प्रकार विद्यार्थियों के मन में कुंठा, भय, घृणा, आक्रोश आदि का सूत्रपात हो जाता है जो विद्यार्थी के भावी जीवन के लिए घातक ही नहीं अभिशाप बन जाते हैं ।

स्वामी विवेकानंद ने चरित्र शिक्षा, स्त्री शिक्षा, सार्वजनिक शिक्षा, आत्मनिर्भर बनाने वाली शिक्षा पर भी अपने मौलिक विचारों का प्रतिपादन किया है । उन्होंने शिक्षण पद्धति को विद्यार्थियों पर थोपने का हमेशा पुरजोर विरोध किया और इसे ज्ञान का आविष्कार करने में साधन के रूप में स्वीकार किया है । अत: वह विद्यार्थियों के ध्यान, चित्त की एकाग्रता, अभ्यास तथा ज्ञान प्राप्ति की भूख को अनिवार्य बतलाते है । विद्यार्थियों से उनकों यह अपेक्षा रही है कि वे अपने शिक्षकों के प्रति विनम्र, श्रद्धा, निष्ठा और समर्पण का भाव रखे । उनमें ज्ञान प्राप्त करने की पिपासा, नया कुछ करने की सहज जिज्ञासा, चित्त की वृत्तियों की एकाग्रता तथा जीवन से संघर्ष करने की श्क्ति भी हो । इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विद्यार्थी ब्रह्मचर्य धारण करें । इसके साथ ही साथ शिक्षकों से भी यह अपेक्षा की गई है कि वे चरित्रवान, ज्ञानवान तथा सेवाभावी हों । शिक्षक अपने ज्ञान का उपयोग पांडित्य प्रदर्शन अथवा अपना व्यक्तित्व थोपने की दृष्टि से न करें अपितु अपने चरित्र, गुणों तथा कार्यों द्वारा अपने विद्यार्थियों के मन में ऐसी छवि अंकित करें जिससे विद्यार्थी स्वत: ही विनम्र श्रद्धावान होकर उनके प्रति अपने को समर्पित कर दें ।

स्वामी विवेकानंद जी का शिक्षा दर्शन एक बहुत ही विस्तृत पर गंभीर विषय है इसकी चंद शब्दों या पृष्ठों में विवेचना करना एक अत्यंत दुरूह कार्य है फिर भी इस संक्षिप्त लेख द्वारा स्वामीजी के शिक्षा दर्शन को छूने भर का एक भरसक प्रयास करने की चेष्टा की गई है और इस प्रयास द्वारा मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि स्वामी विवेकानंद जी शिक्षा के माध्यम से ऐसे शिक्षक और विद्यार्थियों को तैयार करना चाहते थे जो स्वयं राष्ट्र तथा विश्व के समक्ष अपने आप को एक सुयोग्य नागरिक साबित कर सकें । अंततोगत्वा मैं निम्नलिखित उद्धरण द्वारा इस लेख को समाप्त करना चाहता हूं :-

शिक्षा है अधिकार हमारा
हम सुधरें, सुधरे जग सारा ।

द्वारा श्री भूप सिंह
बुकिंग पर्यवेक्षक, मध्य रेल, मुंबई छशिट

प्रत्येक व्यक्ति को अपना उद्धार स्वयं करना होगा - उसका कार्य उसी को करना होगा। मैं किसी से सहायता की भीख नहीं मांगता, न मैं किसी की दी हुई सहायता की अपेक्षा करता हूं- न तो संसार में किसी से सहायता लेने का कोई अधिकार मुझको है । जिस किसी ने मेरी सहायता की है या जो कोई भविष्य में ऐसा करेगा, यह मुझ पर उसकी उदारता है, मेरा अधिकार नहीं, और इस प्रकार मैं उसका सतत आभारी हूं ।

स्वामी विवेकानंद

गजल

गणपत के. कपिल

सपनों का भरोसा नहीं

सपने टूट जाते हैं

पल भर हसाते हैं

और बरसों रूलाते हैं

दस्तूर ये दुनियां क्या

है दिखावे का सारा जहां

मतलबी इस जमाने में

क्या अपना-पराया यहां

अपनों का भरोसा नहीं

अपने रूठ जाते हैं

सपनों का भरोसा नहीं

सपने टूट जाते हैं

दिल तो है छोटा सा

और दर्द है कितना यहां

है हकीकत ये दुनिया की

कितना मुश्किल है जीना यहां

जीवन का भरोसा नहीं

पल में लुट जाते हैं

मशिनिष्ट - III
इंजीनियरी कारखना, मध्य रेल, मनमाड़

ध्यान शक्ति के चमत्कार : विवेकानंद

नीति कौशल

दुनिया के प्राय: सभी धर्मों, मतों, संप्रदायों में इसी एक बात पर ही जोर दिया गया है कि हमारा आचरण दूसरों के प्रति उदार और साफ कैसे बने, हमारा अंतरमन शुद्ध कैसे बने, आनंद और शांति की प्राप्ति कैसे हो? कहना न होगा कि इसीलिए हरेक धर्म में ध्यान पद्धतियों को खास महत्व दिया गया है और हिंदू तथा बौद्ध धर्म में तो जीवन की संपूर्ण कारीगरी ही ध्यान में निहित मानी गई है । भगवद् गीता के अनुसार योग में भी ध्यान अथवा समाधि ही केंद्रीय विषय वस्तु है। ध्यान का अर्थ है मन को लक्ष्य पर केंद्रित करना और बाहर की पूरी दुनिया, बाधाओं, समस्याओं और आपदाओं को भूल जाना । एक बार जब मन किसी भी चीज पर केंद्रित हो जाता है तो वह ब्रह्मांड की सभी शक्तियों को अपने में समेट लेता है और ठीक जैसा हम सोचने लगते है वैसा ही होने लगता है । यह एक प्राकृतिक नियम है कोई चमत्कार नहीं और यह शक्ति प्रकृति ने सभी मनुष्यों को उपहार के रूप में दी है पर हम में से बहुत कम लोग ही अपने में छिपी इस शक्ति को पहचान पाते हैं। प्राय: मन की कल्पना और संकल्प शक्ति का उपयोग अधिकतर लोग सीमित और सांसारिक उपादानों के लिए ही करते हैं और पूरा जीवन उन्हीं में फंसे रह जाते हैं। अंत में उन्हें मिलते हैं - दुख,निराशा,आक्रोश,क्लेश, संत्रास,कष्ट,हताशा और असफलता। क्या आप भी इसी को जीवन का उद्देश्य मानते हैं? विवेकानंद ध्यान के जरिए मन की एकाग्रता को ही जीवन की सभी सफलताओं की गारंटी मानते थे। जीवन है तो कष्ट आएंगे ही, संघर्ष, चुनौतियां, तनाव और पराभव - ये सभी रहेंगे ही पर मानवीय अस्मिता इन सभी के ऊपर और अपराजेय है - उसे पराजित होने देना ही कायरता है। जिससे बचाव का एक ही तरीका है, निर्भीकता यानि परिस्थितियों का डटकर मुकाबला करना - यह शक्ति हमें मन की शुद्धता, सक्रियता और सजीवता से ही मिलती है- उसकी सकारात्मक सोच से मिलती है । जीवन में सभी कुछ मन में ही घटित होता है -यहां तक कि बीमारियां भी । हमारे मन में जो विचार उठते हैं, वही वापस लौटकर फिर मन में आते हैं । अत: अच्छे विचार करने पर अच्छे और बुरे विचार करने पर बुरे विचार ही लौटकर हमारे मन में आते हैं। मन के संचालक हम ही हैं और हम ही उससे प्रभावित भी होते हैं। इसमें कोई भी ईश्वरीय शक्ति बीच में दखल नहीं देती - कोई किसी का बुरा नहीं करता और न कोई किसी का भला ही करता है। विचार ही भाग्य बन जाता है और कर्म ही पुरूषार्थ बन जाते हैं। इन दोनों के बीच का खाली क्षेत्र ही हमारी संघर्ष की शक्ति और निर्भीकता से परिस्थितियों का सामना करने की क्षमता के परीक्षण का क्षेत्र बनता है । विवेकानंद की ध्यान पद्धति पहले जीवन को मजबूत बनाती है फिर आगे आध्यामिकता की ओर अग्रेषित होती है। यह जीवन की चुनौतियों को भुलाकर एकात्मक मुक्ति का पाठ नहीं पढ़ाती । विवेकानंद जी मार्गदर्शन करते हैं कि जब मन शांत हो तब शांत, स्वच्छ और पवित्र स्थान में बैठकर ध्यान लाभप्रद रहता है । ध्यान से धीरे-धीरे मन दुनिया में न भटककर स्वयं का ही अनुसंधान करता है जिससे मनोबल और साहस में वृद्धि होती है, नैतिकता बढ़ती है। आखिर जीवन की समग्रता के लिए इससे बढ़कर और क्या चाहिए ? ध्यान स्वयं को ही विराट नहीं बनाता बल्कि आपको उस शिखर तक ले जाता है जहां पहुंच कर आप स्वयं दूसरों के कल्याण की सोचने लगते हैं।

वरिष्ठ अनुवादक,
भंडार विभाग, मध्य रेल, मुंबई छशिट

विवेकानंद

सत्य नारायण दुबे 'सत्य'

विवेक और आनंद का दैवी सम्मिश्रण ।
चरितार्थ हुआ जीवन में आध्यात्मिक आकर्षण ।।

सूक्ष्मातिसूक्ष्म ज्ञान का लोकोपकारी दुरूह पंथ ।
देशप्रेम से आप्लावित परोपकारी आर्षेय संत ।।

गुरू से गोविंद सी आस्था जीवन में तत्वों का सार ।
गुरू को मिली गुरूता शिष्य को सात्विक विचार ।।

कर्म, वाणी, त्याग, वैराग्य, ज्ञान की प्रतिमूर्ति ।
भारत भारतीयता राष्ट्र चेतना से सुदीप्त ।।

सात समंदर पार, पश्चिमी सभ्यता का अहंकार ।
समागम हुआ विचारों का, नए बिंदु हुए साकार ।।

विश्व संबोधन के मूल में भारतीयता, वाणी में मोहिनी छटा ।
मन तृप्त, जन समुदाय मूर्तिवत ऐसा इतिहास घटा ।।

गेरूआ वेषधारी युवा राष्ट्रसंत का उद्‌बोधक झंझावात ।
पिघल गया पश्चिमी अहंकार, कायल मन प्राण गात ।।

जीवन का रहस्य भोग में नहीं, प्रतिपादित किया।
आध्यात्मिक अनुभव से प्राप्त शिक्षा को ही निरूपित किया।।

तटबंध तोड़ चला भावों का वेग, मन संतवाणी में खो गया।
विश्व बंधुत्व की व्यापक भावना से जगत एकरस हो गया।।

यशोगाथा, हिमालय के अंचल से दक्खन के समंदर तक ।
ऋषि मुनियों की ऋचाओं सी फैली धरा-अंबर तक ।।

विश्व मंच पर भारत का महत्व आविर्भूत हुआ ।
विश्व गुरू के रूप में भारत उद्‌षित हुआ ।।

कनिष्ठ अनुवादक,
महाप्रबंधक कार्यालय,मध्य रेल
मुंबई छशिट

विवेकानंद

संगीता मिश्रा

भारत की इस पावन धरती पर 13 जनवरी, 1863 में कोलकाता में विश्वनाथ दत्त के घर देव पुत्र जैसे सुन्दर तेजस्वी बालक ने जन्म लिया । बालक का नाम नरेंद्रनाथ रखा गया। साक्षात् शंकर भगवान से आशीर्वाद के रूप में पुत्र पाकर मां भुवनेश्वरी देवी अति प्रसन्न थीं । इतना लाड़-प्यार करतीं थीं कि नरेंद्र एकदम हठी और निडर हो गए । किसी की भी धमकी से नहीं डरते थे और अपनी मनमानी किया करते थे । मां शांत करने के लिए घड़े से पानी डाल कर शिव-शिव करतीं फिर नरेंद्र शांत होते । मां बेटे को डांटने कि बजाय भगवान शंकर से शिकायत करती हुई कहतीं, लगता है आपने अपने गणों में से किसी एक को भेज दिया है।

बचपन से ही नरेंद्र नाथ ध्यान लगा कर बैठ जाते थे जैसे कोई साधु-संन्यासी हो । साधु-संन्यासियों से भी उनका गहरा लगाव था । एक बार घर आए साधु को अपने नए-नए वस्त्र उतारकर देने लगे तो मां को डर लगा कि कहीं यह भी साधु संन्यासी न बन जाए इसलिए उन्हें एक कमरे में बंद कर दिया। जब साधु के जाने के बाद दरवाजा खोला तो देखा कि उन्होंने अपने कपड़े खिड़की से साधु को दे दिए थे ।

जब नरेंद्र नाथ किशोर हुए तो उनके पिता ने एक दिन पूछा तुम बड़े होकर क्या बनना चाहते हो । नरेंद्र का जवाब था "कोचवान" । यह सुनकर पिता कुछ नहीं बोले पर कुछ देर बाद प्रश्न किया "कोचवान मतलब सारथी" । जी हां सारथी नरेंद्र नाथ का जवाब था ।

विश्वनाथ दत्त ख्याति प्राप्त वकील के साथ-साथ वैदिक धर्म दर्शन के पंडित भी थे । घर में हमेशा धर्म, दर्शन, समाज, राजनीति आदि प्रसंगों पर विचार विनिमय चलता रहता था। नरेंद्र नाथ बड़े ध्यान से यह सब सुना करते थे । कभी-कभी ऐसा जटिल प्रश्न पूछ बैठते कि सभी चकित रह जाते ।

एक समर्थ पिता के रूप में विश्वनाथ दत्त यह जानते थे कि नरेंद्र किसी दफ्तर में बाबू बनकर जीविका चलाते हुए जिंदगी गुजार देने के लिए पैदा नहीं हुए हैं। जिसके मन में सारथी बनने की इच्छा हो वह किसी के इशारे पर कैसे चल सकता है ।

इंटर करते-करते वह पश्चिम के दिग्गज दार्शनिकों हूम, स्पेंसर, हीगेल, कांट आदि के मतों का मनन कर चुके थे । आस्तिक-नास्तिक दोनों ही मत धाराओं की जानकारी प्राप्त कर ली थी । पर यह सब ज्ञान प्राप्त करने के बाद वे सत्य के ज्ञान के लिए और भी व्यग्र हो गए और ब्रह्म समाज की ओर आकर्षित हो गए । कालेज में दर्शन विभाग के अध्यक्ष थे मिस्टर हेस्टी । एक दिन पढ़ाते समय वह योग के प्रसंग में बताने लगे । नरेंद्र नाथ ने अचानक प्रश्न किया क्या आपने स्वयं किसी ऐसे व्यक्ति को देखा है जो समाधिस्थ होने में सिद्ध हो ? उत्तर मिला हां दक्षिणेश्वर में परमहंस श्री रामकृष्ण हैं जो समाधिस्थ होने में सिद्ध हैं और नरेंद्रनाथ को उनकी दिशा मिल गई ।

मन में नरेंद्रनाथ ने अपने को परमहंस के अधीन कर लिया। परमहंस ने भी उन्हें अपना मानकर एक दिन कहा मेरे पास अष्टसिद्धी है तू लेगा? नरेंद्र ने पूछा क्या इन सिद्धियों से मुझे ईश्वर के साक्षात्कार में सहायता मिलेगी? परमहंस के नहीं कहने पर तुरंत ही नरेंद्र ने कहा फिर मुझे इसकी कोई आवश्यकता नहीं है ।

बी.ए. के बाद वह एलएलबी की शिक्षा प्राप्त करने लगे । उन्हीं दिनों उनके पिता का देहान्त हो गया और उनके परिवार पर आर्थिक संकट छा गया । घर में खाने के लाले पड़ गए। नरेंद्र कामकाज की खोज में लगातार भागते रहते । एक दिन जब उनकी मां ने कहा जो ईश्वर एक मुट्ठी अन्न का प्रबंध नहीं कर सकता वह ईश्वर किस काम का । मां के मुंह से ऐसी बात सुनकर नरेंद्रनाथ स्तंभित रह गए और भागते हुए परमहंस के पास जा पहुंचे और परमहंस से कहा आप मेरे परिवार के लिए काली माता से प्रार्थना करके रोटी कपड़े का दुख कटवा दीजिए । परमहंस ने कहा यह कैसे हो सकता है एक तो तेरी मां के प्रति श्रद्धा नहीं है दूसरे मैं कभी मां से यह सब मांगता नहीं हूं । नरेद्र ने कहा कुछ भी हो आप आज मेरे लिए मांगिए। परमहंस ने कहा तब तुम अपने लिए स्वयं मां से मांग लो । तुम जो मांगोगे अवश्य मिलेगा।

नरेंद्र नाथ मां काली के आगे जा खड़े हुए और मां के आगे सिर झुका दिया। सिर उठाने पर लगा देवी साक्षात खड़ी मुस्कुरा रहीं हैं और उनकी तरफ देख रही हैं । नरेंद्र ने गदगद होकर मां से तुंरत वरदान मांग लिया। मां मुझे विवेक दो, मेरा पाप हर लो, मुझे पवित्र कर दो, मुझे ज्ञान दो कि मैं सत्य को जान सकूं, मुझें भक्ति दो, विश्वास दो, सत्य पर मेरी श्रद्धा हो, इन सांसारिक झंझटों से विरक्त हो सकूं । मुझे ऐसा आत्म बल दो । लगा मां ने प्रार्थना सुन ली । नरेंद्र को शान्ति और सुख प्रतीत होने लगा। मंदिर से जब बाहर निकले तो परमहंस ने पूंछा क्यों नरेंद्र मांग लिया । नरेंद्र ने सारी बातें बताई तो उन्होंने कहा, ये क्या मांग आया जा फिर मांग जो मांगने गया था। नरेंद्र दूसरी बार भी वहीं ज्ञान भक्ति मांग आएं, परमहंस ने फिर तीसरी बार भेजा और बोले जा अबकी बार सही-सही मांगना । नरेंद्र फिर आंखों से आंसू बहाते हुए लौट आए और बोले मैं मां से वह सब नहीं मांग सकता वह सारे संसार की मां हैं वही मेरे परिवार को पालेंगी । सब कुछ छोड़ कर नरेंद्र ने केवल एक वस्त्र में अपने आप को परमहंस के चरणों में समर्पित कर दिया । परमहंस ने अपने अंत समय में अपने शिष्यों के बीच यह घोषणा कर दी कि नरेंद्र ही तुम्हारा नेता है । यह जैसा कहे वैसा ही करना । परमहंस की समाधि के बाद नरेद्र नाथ विवेकानंद हो गए ।

स्वामी विवेकानंद सारे भारत में ही नहीं अपितु सारे विश्व में अपनी ज्ञान गरिमा अप्रतिम व्यक्तित्व को लेकर प्रख्यात हुए । बहुजन हिताय बहुजन सुखाय की मंत्र दीक्षा दी । डूबते हुए हिंदू धर्म की ध्वजा को विदेशों में फहराया ।

कनिष्ठ लिपिक
राजभाषा विभाग,मध्य रेल, मुंबई छशिट

रचनाकारों से अपील

- **रेल सुरभि में अपनी स्तरीय रचनाएं भिजवाएं ।**
- **रचनाएं डबल स्पेस में टंकित करवार भिजवाएं ।**
- **अस्वीकृत रचनाएं वापस नही की जाएंगी ।**
- **रचना की मूलप्रति अपने पास ही रखें ।**
- **पत्रिका के संबंध में अपनी प्रतिक्रिया/सुझाव पत्र अथवा ई-मेल द्वारा भेजे ।**